

दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

रि.या.(सि) 9098/2024 में निर्णय आरक्षित : 08.07.2024

रि.या.(सि) 9227/2024 में निर्णय आरक्षित : 09.07.2024

निर्णय उद्घोषित : 18.07.2024

रि.या.(सि) 9098/2024 और सि.वि. आ. 37244/2024

पुलिस आयुक्त व अन्य

.....याचीगण

द्वारा : सुश्री अवनीश अहलावत, स्थायी
अधिवक्ता सह श्री नीतेश कुमार
सिंह, सुश्री लावण्या कौशिक, सुश्री
अलीज़ा आलम व श्री मोहनीश
सहरावत, अधिवक्तागण।

बनाम

श्री करम पाल

.....प्रत्यर्थी

द्वारा : सुश्री उर्वी मोहन, अधिवक्ता।

रि.या.(सि) 9227/2024 और सि.वि. आ. 37808/2024 (रोक)

पुलिस आयुक्त व अन्य

.....प्रत्यर्थीगण

द्वारा : सुश्री अवनीश अहलावत, स्थायी
अधिवक्ता सह श्री नीतेश कुमार
सिंह, सुश्री लावण्या कौशिक, सुश्री
अलीज़ा आलम व श्री मोहनीश
सहरावत, अधिवक्तागण।

बनाम

राम किशन मेहता

.....प्रत्यर्थी

द्वारा : सुश्री उर्वी मोहन, अधिवक्ता।

कोरम:

माननीय न्यायमूर्ति श्री सुरेश कुमार कैत

माननीय न्यायमूर्ति श्री गिरीश कठपालिया

[भौतिक सुनवाई/हाइब्रिड सुनवाई (अनुरोध के अनुसार)]

न्या. गिरीश कठपालिया,

1. भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत प्रस्तुत की गई इन रिट याचिकाओं में समान कानूनी और तथ्यात्मक परिस्थियां शामिल हैं, इसलिए इन्हें निपटान के लिए एक साथ लिया जाता है। ये दोनों रिट याचिकाएं केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण, नई दिल्ली की विद्वान प्रधान पीठ द्वारा पारित आदेशों को चुनौती देती हैं, जिसमें वर्तमान प्रत्यर्थीगण द्वारा दायर मूल आवेदनों को आंशिक रूप से अनुमति दी गई थी, और अनुशासनात्मक और अपीलीय प्राधिकरणों द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 12.12.2022 और 30.05.2023 के आदेशों को अपास्त कर दिया गया था, जिससे आगे सभी परिणामी लाभ दिए गए, हालांकि वर्तमान याचीगण को वर्तमान प्रत्यर्थीगण के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने की स्वतंत्रता भी दी गई थी।

2. अग्रिम नोटिस के आधार पर, प्रत्यर्थीगण ने अधिवक्ता द्वारा उपस्थिति दर्ज की और सभी संबंधित लोगों के अनुरोध पर, रि.या.(सि)

9098/2024 में दिनांक 08.07.2024 और रि.या.(सि) 9227/2024 में दिनांक 09.07.2024 पर अंतिम दलीलें सुनी गईं। इन याचिकाओं में शामिल मुद्दा भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) के तहत प्रत्यर्थीगण को सेवा से बर्खास्त करने को चुनौती है, जिस बर्खास्तगी को अपीलीय प्राधिकरण द्वारा बरकरार रखा गया था, लेकिन विद्वान अधिकरण द्वारा अपास्त कर दिया गया था, जिससे वर्तमान याचिकाएं प्रस्तुत हुई हैं।

3. वर्तमान याचिकाओं के प्रस्तुत होने के संबंध में संक्षेप में बताई गई परिस्थितियाँ इस प्रकार हैं। पवन गुप्ता नामक व्यक्ति की शिकायत दिनांकित 11.11.2022 पर, सी.बी.आई. द्वारा एक जाल बिछाया गया था जिसमें दिल्ली पुलिस में हेड कांस्टेबल के रूप में कार्यरत दोनों प्रत्यर्थीगण को कथित रूप से पुलिस थाना साकेत के अधिकार क्षेत्र में लाडो सराय के पुलिस बूथ पर रिश्वत लेते हुए रंगे हाथों पकड़ा गया था, इसलिए दोनों को गिरफ्तार कर लिया गया और सी.बी.आई./ए.सी.बी./नई दिल्ली के आर.सी. 023022ए0065 दिनांकित 13.11.2022 में न्यायिक हिरासत में भेज दिया गया। नतीजतन, दोनों प्रत्यर्थीगण को दिनांक 13.11.2022 से प्रभावी रूप से निलंबित कर दिया गया और उनके खिलाफ प्रारंभिक जांच की गई। दिनांक 12.12.2022 के आदेश के माध्यम से, दोनों प्रत्यर्थीगण को, भारत के

संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) के तहत शक्तियों को लागू करते हुए, उनके अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा बर्खास्त कर दिया गया था, जिसे अपीलीय प्राधिकरण द्वारा दिनांकित 30.05.2023 के आदेश के माध्यम से बरकरार रखा गया था। इस प्रकार, प्रत्यर्थागण ने अपने व्यक्तिगत मूल आवेदन दायर किए और उन्हें आक्षेपित आदेशों के माध्यम से अनुमति दी गई, जिससे अनुशासनिक प्राधिकारी और अपीलीय प्राधिकरण के आदेशों को अपास्त कर दिया गया और वर्तमान प्रत्यर्थागण को परिणामी लाभ प्रदान किए गए, हालांकि वर्तमान याचीगण को उनके खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने की स्वतंत्रता थी। इसलिए, वर्तमान रिट याचिकाएँ प्रस्तुत हुईं।

4. दलीलों के दौरान, याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने हमें आक्षेपित आदेशों के बारे में बताया और तर्क दिया कि वे विधि की दृष्टि में रक्षणीय नहीं हैं। याचीगण की ओर से यह तर्क दिया गया कि चूंकि पवन गुप्ता की शिकायत के आधार पर बिछाए गए सी.बी.आई. के जाल में प्रत्यर्थागण को रिश्वत लेते हुए रंगे हाथों पकड़ा गया था, इसलिए विभागीय जांच करने की कोई आवश्यकता नहीं थी, विशेष रूप से क्योंकि प्रारंभिक जांच में, प्रत्यर्थागण को कदाचार का दोषी पाया गया था। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि यदि विभागीय जांच का आदेश दिया भी जाता, हमेशा की तरह कोई

भी गवाह प्रत्यर्थीगण के खिलाफ गवाही देने के लिए आगे नहीं आता। यह भी तर्क दिया गया कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) के तहत शक्तियों का उपयोग करके विभागीय जांच न करने का निर्णय अनुशासनिक प्राधिकारी की व्यक्तिपरक संतुष्टि पर आधारित होना चाहिए जैसा कि *जसवंत सिंह बनाम पंजाब राज्य*, (1991) 1 एससीसी 362 के मामले में अभिनिर्धारित किया गया था। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि चूंकि प्रत्यर्थीगण के खिलाफ बर्खास्तगी के आदेश वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों द्वारा पारित किए गए थे, जो वर्षों के पश्चात उच्च पदों पर पहुंचे हैं, इसलिए इसे हल्के में नहीं लिया जा सकता है। याचीगण की ओर से आगे यह तर्क दिया गया कि अपराध की गंभीरता और इसके संभावित परिणामों को देखते हुए, भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) के तहत शक्तियों का उचित रूप से उपयोग किया गया था।

5. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने विद्वान अधिकरण के आक्षेपित आदेशों का समर्थन किया और तर्क दिया कि वर्तमान याचिकाएं गुणागुण से रहित हैं। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) के तहत शक्तियों को अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा जांच करने की उचित व्यवहार्यता की जांच किए बिना मनमाने ढंग से लागू

नहीं किया जा सकता है। प्रत्यर्थागण के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि चूंकि याचीगण द्वारा किसी भी गवाह को तलब करने का कोई प्रयास नहीं किया गया था और यह दिखाने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि दोनों में से कोई भी या दोनों प्रत्यर्थागण गवाहों को डराएंगे, इसलिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) के तहत शक्तियों का उपयोग उचित नहीं था। उनकी दलीलों के समर्थन में, प्रत्यर्थागण के विद्वान अधिवक्ता ने कुछ न्यायिक पूर्व निर्णयों के साथ-साथ याचीगण के परिपत्रों पर भरोसा किया, जैसा कि आगे चर्चा की गई है।

6. उपरोक्त पृष्ठभूमि में, हमारे सामने विषय यह है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) के तहत शक्तियों के उपयोग द्वारा प्रत्यर्थागण को सेवा से बर्खास्त करना विधि की दृष्टि में रक्षणीय है या नहीं।

7. भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2) के तहत प्रावधान कई न्यायिक और साथ ही प्रशासनिक निर्णयों की विषय-वस्तु रहा है, क्योंकि यह हितकारी प्रावधान सरकारी कर्मचारी को प्रतिशोध और/या उसकी सेवाओं की मनमाने ढंग से समाप्ति से बचाता है। इस तरह की सुरक्षा किसी भी सरकारी कर्मचारी के लिए महत्वपूर्ण है ताकि वह राष्ट्रीय हित में अपने विवेक के अनुसार निर्णय ले सके और कार्य कर सके। यह प्रावधान प्राकृतिक न्याय के मूल से उत्पन्न होता है कि

किसी व्यक्ति के लिए प्रतिकूल कोई भी प्रशासनिक कार्रवाई उस व्यक्ति को सुनने का उचित अवसर दिए बिना नहीं की जा सकती है। सेवाओं की समाप्ति या सरकारी कर्मचारी पर लगाए जाने वाले किसी अन्य दंड के मामलों में, आरोपों की विभागीय जांच सुनवाई के अधिकार का एक महत्वपूर्ण पहलू है, जिसके तहत प्रभावित सरकारी कर्मचारी को अपने खिलाफ लगाए गए आरोपों की सच्चाई को चुनौती देने का अवसर मिलेगा। राज्य और अधीन-व्यक्ति के बीच शक्ति की अत्यधिक असमानता को देखते हुए, यह आवश्यक है कि अधीन-व्यक्ति अपनी रक्षा करने के उचित अवसर से वंचित न रहे।

8. एक अन्य प्रतिमान यह है कि यह सुनिश्चित करने के लिए कि सरकार की सेवा करने वाले किसी भी अधिकारी के व्यक्तिगत प्रतिशोध के कारण किसी कुशल और सक्षम कर्मचारी को राज्य की सेवाओं से वंचित नहीं किया जाना चाहिए, आरोपों का विभागीय जांच द्वारा परीक्षण किया जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, विभागीय जांच की कार्यवाही न केवल अधीन-व्यक्ति बल्कि राज्य के भी लाभ के लिए होती है।

9. यह उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 के तहत प्रावधान का विश्लेषण किया जाना है। इस प्रावधान को यहाँ उद्धृत करना उचित होगा :-

“311. संघ या किसी राज्य के तहत नागरिक क्षमताओं में कार्यरत व्यक्तियों को बर्खास्त करना, हटाना या उनके पद में अवनति करना

- (1) कोई भी व्यक्ति जो संघ की सिविल सेवा या अखिल भारतीय सेवा या किसी राज्य की सिविल सेवा का सदस्य है या संघ या राज्य के तहत सिविल पद रखता है, उसे उस प्राधिकारी द्वारा, जो उस व्यक्ति को नियुक्त करने वाले प्राधिकारी के अधीनस्थ है, बर्खास्त या हटाया नहीं जाएगा।
- (2) उपरोक्त किसी भी व्यक्ति को बर्खास्त या पद से हटाया या उसके पद में अवनति नहीं की जाएगी, सिवाय उस जांच के पश्चात जिसमें उसे उसके खिलाफ आरोपों के बारे में सूचित किया गया हो और उन आरोपों के संबंध में सुनवाई का उचित अवसर दिया गया हो।

बशर्ते कि जहां ऐसी जांच के बाद उस पर ऐसी कोई शास्ति लगाने का प्रस्ताव है, वहां ऐसी शास्ति ऐसी जांच के दौरान दिए गए साक्ष्य के आधार पर लगी जा सकती है और ऐसे व्यक्ति को प्रस्तावित दंड पर अभ्यावेदन प्रस्तुत करने का कोई अवसर देना आवश्यक नहीं होगा।

इसके अतिरिक्त यह प्रावधान है कि यह खंड वहां लागू नहीं होगा:-

- (क) जहाँ किसी व्यक्ति को उस आचरण के आधार पर बर्खास्त या हटा दिया जाता है या पद में अवनति कर दी जाती है जिसके कारण उसे आपराधिक आरोप में दोषी ठहराया गया है; या
 - (ख) जहां किसी व्यक्ति को बर्खास्त करने या हटाने या पद में अवनति करने के लिए सशक्त प्राधिकारी को संतुष्ट हो जाती है कि किसी कारण से, जिस कारण को उस प्राधिकारी द्वारा लिखित रूप में दर्ज किया जाना चाहिए, ऐसी जांच करना तर्कसंगत रूप से व्यावहारिक नहीं है; या
 - (ग) जहां, राष्ट्रपति या राज्यपाल, जैसा भी मामला हो, संतुष्ट हो जाते हैं कि राज्य की सुरक्षा के हित में ऐसी जांच करना समीचीन नहीं है।
- (3) यदि, उपरोक्त किसी ऐसे व्यक्ति के संबंध में, यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या ऐसी जांच करना तर्कसंगत रूप से व्यावहारिक है

जैसा कि खंड (2) में संदर्भित किया गया है, तो उस पर ऐसे व्यक्ति को बर्खास्त करने या हटाने या उसके पद में अवनति करने के लिए सशक्त प्राधिकारी का निर्णय अंतिम होगा।

10. जैसा कि ऊपर उद्धृत किया गया है, भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 के तहत प्रावधान को इसकी पूर्णता में पढ़ने पर, यह नजर आता है कि मूल सिद्धांत यह है कि किसी भी सरकारी कर्मचारी को बर्खास्त या हटाया या उसके पद में अवनति नहीं की जाएगी, सिवाय उस जांच के पश्चात, जिसमें उसे उसके खिलाफ आरोपों के बारे में सूचित किया गया हो और उसे उन आरोपों पर सुनवाई का उचित अवसर दिया गया हो और उस पर लगाई गई शास्ति केवल ऐसी जांच के दौरान दिए गए साक्ष्य के आधार पर होनी चाहिए। इस मूल सिद्धांत को अधिकथित करने के बाद, प्रावधान इस प्रभाव के लिए अपवाद बनाता है कि आरोपों की जांच को उस मामले में करने से बचा जा सकता है जहां कदाचार के कारण सरकारी कर्मचारी को दोषसिद्ध ठहराया गया है या जहां राष्ट्रपति या राज्यपाल संतुष्ट हो जाते हैं कि राज्य की सुरक्षा के हित में, ऐसी जांच करना समीचीन नहीं है या “जहां किसी व्यक्ति को बर्खास्त करने या हटाने या पद में अवनति करने के लिए सशक्त प्राधिकारी को संतुष्ट हो जाती है कि किसी कारण से, जिस कारण को उस प्राधिकारी द्वारा लिखित रूप में दर्ज किया जाना चाहिए, ऐसी जांच करना तर्कसंगत रूप से व्यावहारिक नहीं

है¹¹। यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) का इंटैलिक्स में उद्धृत भाग है, जिससे हमारा संबंध है।

11. यह सामान्य बात है कि किसी भी कानून की व्याख्या करते समय, परंतुक द्वारा प्रस्तुत अपवाद को इस तरह से नहीं पढ़ा जा सकता है ताकि मुख्य प्रावधान को नकारा जा सके। भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 के तहत मुख्य प्रावधान यह है कि किसी विभागीय जांच के बिना एक सरकारी अधिकारी की किसी प्रकार की बर्खास्तगी या निष्कासन या पद में अवनति की अनुमति नहीं है। उक्त सिद्धांत के अपवादों में से एक भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) के रूप में है और इसे केवल एक अपवाद के रूप में पढ़ा जाना चाहिए और अन्यथा नहीं। यहां तक कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) में इस आशय का आदेश जारी किया गया है कि संबंधित प्राधिकारी को लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के माध्यम से अपनी संतुष्टि दर्ज करनी है, यह दर्शाता है कि इस प्रावधान को हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए।

12. **भारत संघ बनाम तुलसी राम पटेल**, (1985) 3 एस.सी.सी. 398 के मामले में भारत के सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) के तहत कानूनी स्थिति की जांच की और अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 311(2)(ख) के तहत

शक्तियों का उपयोग करने से पूर्व-अपेक्षित शर्त अनुशासनिक प्राधिकारी की यह संतुष्टि है कि अनुच्छेद 311(2) द्वारा परिकल्पित जांच “आयोजित करना तर्कसंगत रूप से व्यावहारिक नहीं है”। “तर्कसंगत रूप से व्यावहारिक नहीं” और “अव्यावहारिक”, साथ ही “तर्कसंगत रूप से अव्यावहारिक” और “व्यावहारिक नहीं” अभिव्यक्तियों के बीच अंतर को स्पष्ट करते हुए, शीर्ष न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद 311(2)(ख) को लागू करने के लिए जो आवश्यक है वह यह है कि मौजूदा स्थिति को तर्कसंगत रूप से देखने वाले एक तर्कशील व्यक्ति की राय में जांच का आयोजन व्यावहारिक न होना। माननीय उच्चतम न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया कि उन परिस्थितियों की गणना करना संभव नहीं है जिनमें जांच करना तर्कसंगत रूप से व्यावहारिक नहीं होगा, हालांकि कुछ ऐसी परिस्थितियां हो सकती हैं जहां सरकारी कर्मचारी व्यक्तिगत रूप से या सहयोगियों द्वारा उन गवाहों को प्रतिशोध का डर दिखा कर ऐसे आतंकित करता है, धमकी देता है या डराता है, जिनसे उसके खिलाफ गवाही देने की उम्मीद की जाती है ताकि उन्हें ऐसा करने से रोका जा सके या जहां सरकारी कर्मचारी स्वयं या अपने सहयोगियों द्वारा अनुशासनिक प्राधिकारी या उसके परिवार के किसी सदस्य को धमकी देता है, डराता है या आतंकित करता है ताकि उसे जांच करने से डराया जा सके या जहां हिंसा या सामान्य अनुशासनहीनता और

अवज्ञा का माहौल प्रबल हो। यह अनुशासनिक प्राधिकारी है जिसे अपनी संतुष्टि दर्ज करते समय स्थिति का आकलन करना होता है कि जांच करना तर्कसंगत रूप से व्यावहारिक नहीं होगा।

13. **जसवंत सिंह** (पूर्वोक्त) के मामले में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि जब न्यायालय में अनुच्छेद 311(2)(ख) के तहत जांच करने की तर्कसंगत अव्यावहारिकता के बारे में अनुशासनिक प्राधिकारी की संतुष्टि पर सवाल उठाया जाता है, तो यह स्थापित करना राज्य का काम है कि संतुष्टि वस्तुनिष्ठ तथ्यों पर आधारित है न कि संबंधित अधिकारी की सनक पर।

14. **पुलिस आयुक्त और अन्य बनाम जगमल सिंह**, 2024:डीएचसी:2259-डीबी के मामले में, इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ, जिसमें हममें से एक (गिरीश कठपालिया, न्या.) सदस्य थे, याचीगण की ओर से अनुच्छेद 311(2)(ख) के तहत शक्तियों के उपयोग का औचित्य यह प्रस्तुत किया गया था कि उन्होंने संबंधित अधिकारी के विरुद्ध विभागीय जांच इसलिए नहीं की थी क्योंकि उसके खिलाफ लगाए गए आरोपों की प्रकृति गंभीर थी और संबंधित अधिकारी ने संगठन की छवि को धूमिल किया था, जिसने सेवा में अवांछनीय व्यक्तियों को कठोर संदेश देने के लिए एक अनुकरणीय सजा को आवश्यक बना दिया था। विद्वत अधिकरण के साथ-साथ इस

न्यायालय द्वारा इस औचित्य को खारिज कर दिया गया था, यह मानते हुए कि यह उन मापदंडों के अंतर्गत नहीं आता है जिनके भीतर ऐसी शक्तियों का उपयोग किया जाना है।

15. रा.रा.क्षे. दिल्ली सरकार व अन्य बनाम दुष्यंत कुमार, 2024:डीएचसी:1247-डीबी के मामले में, इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने इसी तरह के मुद्दे पर विचार करते हुए दो महत्वपूर्ण दिशानिर्देश निम्नलिखित रूप से निकाले :-

“9. पक्षकारों के लिए विद्वान अधिवक्ता की प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों पर विचार करने के बाद, हम 21.12.1993 दिनांकित परिपत्र का उल्लेख कर शुरू कर सकते हैं जो उन स्थितियों से निपटने के लिए दिशानिर्देशों को संक्षिप्त रूप से अभिकथित करता है, जहां भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) का सहारा लेकर जांच न करने का निर्णय लिया जाता है। यह निम्नानुसार है :-

“बलात्कार या डकैती या ऐसे किसी भी जघन्य अपराध के मामले में शामिल पुलिस अधिकारियों को इस तथ्य के बावजूद कि आपराधिक मामले दर्ज किए गए हैं, अनुच्छेद 311(2)(ख) के तहत सीधे बर्खास्त कर दिया गया है। विभागीय जांच किए बिना इस तरह की बर्खास्तगी अवैध है क्योंकि ऐसे मामलों में विभागीय जांच को आसानी से आयोजित किया जा सकता है।

एक बार फिर इस बात पर जोर दिया गया है कि अनुशासनिक प्राधिकारी को अनुच्छेद 311(2)(ख) का सहारा आसानी से नहीं लेना चाहिए, बल्कि केवल उन मामलों में लेना चाहिए जहां जांच करना तर्कसंगत रूप से व्यावहारिक नहीं है। जब भी अनुशासनिक प्राधिकारी इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि जांच करना तर्कसंगत रूप से व्यावहारिक नहीं है, तो उसे इस तरह के निष्कर्ष पर

पहुंचने के लिए विस्तृत रूप से ठोस और कानूनी रूप से मान्य कारण दर्ज करने चाहिए। वैध कारणों, विधिवत रूप से लिखित, की अनुपस्थिति में अनुच्छेद 311(2)(ख) का सहारा लेने के साथ बर्खास्तगी आदि का ऐसा कोई आदेश विधि में रक्षणीय नहीं हो सकता है।”

10. अब हम याचीगण के बाद के परिपत्र दिनांकित 11.09.2007 का भी उल्लेख कर सकते हैं, जो फिर से दोहराता है कि जांच को न करने का निर्णय आसानी से नहीं लिया जाना चाहिए। यह निम्नानुसार है :-

“परिपत्र सं./2007

पी.एच.क्यू. द्वारा दिनांक 01.01.2000 से 31.12.2005 के बीच की अवधि से संबंधित 38 मामलों में विश्लेषण किया गया है, जहां चूक करने वालों के खिलाफ भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) के तहत कार्रवाई की गई थी। विश्लेषण से पता चलता है कि 38 मामलों में से, विभाग की कार्यवाही को केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण द्वारा केवल दो मामलों में बरकरार रखा गया है और इन दो मामलों में से केवल एक मामले की कार्यवाही को माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा बरकरार रखा गया था और इनमें से अधिकांश मामलों को विभागीय जांच शुरू करने के लिए अधिकरण द्वारा विभाग में वापस भेज दिया गया है।

हालांकि कुछ मामले अभी भी निर्णय के लिए माननीय उच्च न्यायालय में लंबित हैं, लेकिन अधिकांश मामलों में अनुशासनिक प्राधिकारियों ने धारणाओं और अनुमानों पर अनुच्छेद 311(2)(ख) का सहारा लिया है। पूर्व जांच न करने के लिए अभिलेख पर सामग्री/तथ्यों पर आधारित और उनके द्वारा समर्थित कोई कारण सहित आदेश पारित नहीं किया गया था। बर्खास्तगी के आदेश अनुच्छेद 311 और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करते हुए मनमाने ढंग से पारित किए गए थे।

अब से, यह निर्णय लिया गया है कि जब भी कोई अनुशासनिक प्राधिकारी भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) को लागू करने का इरादा रखेगा, उसे भारत संघ बनाम तुलसी राम पटेल, ए.आई.आर. 1985 एस.सी. 1416 के मामले में दिए गए निर्णय को ध्यान में रखना चाहिए। केवल उन मामलों में जहां अनुशासनिक प्राधिकारी फाइल पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर व्यक्तिगत रूप से संतुष्ट है कि मामला ऐसी प्रकृति का है कि धमकी, प्रलोभन, डराना, अपराधियों के साथ संबंधता आदि को देखते हुए जांच करना व्यावहारिक नहीं है और मामले की विशिष्ट परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह संभव नहीं है कि अभियोजन साक्षिगण गलती करने वाले के विरुद्ध गवाही देंगे और अनुशासनिक प्राधिकारी के पास अनुच्छेद 311(2)(ख) का सहारा लेने के अलावा कोई विकल्प नहीं है तब ऐसी कार्रवाई की जानी चाहिए। इस तरह के आदेश से पहले, एक प्राथमिक जांच आयोजित की जानी चाहिए और ऐसे सभी तथ्यों को अभिलेख पर लाना आवश्यक है। यह भी निर्णय लिया गया है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) के तहत आदेश पारित करने से पहले, अनुशासनिक प्राधिकारी को विशेष पुलिस आयुक्त/प्रशासनिक की पूर्व सहमति लेनी होगी। इसे पुलिस आयुक्त, दिल्ली की मंजूरी प्राप्त है।

हस्ताक्षर/-

संयुक्त पुलिस आयुक्त,
मुख्यालय; दिल्ली"
(जोर दिया गया)

16. इसके अलावा, प्रत्यर्थीगण हमारे ध्यान में पत्र सं.174/सी/एच.सी./24/5110/60/डी.ए.।।।/कोर्ट सेल/पी.एच.क्यू. दिनांकित 13.05.2024 लाए हैं, जिसके तहत, पुलिस आयुक्त के कार्यालय ने पुलिस उपायुक्तों को यह सुनिश्चित करने के लिए परामर्श जारी किया

कि भविष्य में विभागीय जांच न कर बर्खास्तगी आदेश पारित करने से पहले इस न्यायालय के निर्देशों पर विचार किया जाए। इस न्यायालय द्वारा जारी किए गए उक्त निर्देश **दिल्ली पुलिस आयुक्त बनाम मंजीत**, 2024:डीएचसी:3132-डी.बी. के मामले में थे और वे इस प्रकार थे :-

“13. निर्णय करने से पहले, हम यह टिप्पणी करने के लिए विवश हैं कि इस न्यायालय के समक्ष आने वाली पुलिस आयुक्त द्वारा दायर बड़ी संख्या में याचिकाओं में, हम पा रहे हैं कि याचीगण द्वारा बिना किसी वैध कारण को दर्ज किए सबसे यांत्रिक तरीके से विभागीय जांच को न करते हुए बर्खास्त करने के आदेश पारित किए जा रहे हैं। इसलिए हम निर्देश देते हैं कि इस आदेश की एक प्रति दिल्ली पुलिस आयुक्त के समक्ष रखी जाए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि भविष्य में जांचों को न करने का निर्णय उचित कारण बताए बिना न किया जाए।”

17. संक्षिप्तता बनाए रखने के लिए, प्रत्यर्थागण द्वारा उद्धृत शेष न्यायिक पूर्व निर्णयों को यहां उद्धृत नहीं किया जा रहा है। यह दर्ज करने के लिए पर्याप्त है कि बार-बार, इस न्यायालय के साथ-साथ माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने वे व्यापक मानदंड निर्धारित किए हैं, जिनके भीतर अनुच्छेद 311(2)(ख) के तहत शक्तियों का उपयोग किया जा सकता है। लेकिन दुर्भाग्य से, इस तरह की स्पष्ट न्यायिक निर्णयों और यहां तक कि अपने स्वयं के आंतरिक परिपत्रों और आधिकारिक पत्रों के बावजूद, याचीगण उन शक्तियों का अनुचित तरीके

से प्रयोग करना जारी रखे हुए हैं, जिससे उनके अधिकारी अपना बचाव करने के उचित अवसर से वंचित हो जाते हैं।

18. वर्तमान मामले में वापस आते हुए, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, वे आरोप जिनके आधार पर प्रत्यर्पण की सेवाओं को बर्खास्तगी आदेशों के माध्यम से संक्षेपतः समाप्त कर दिया गया था, ये हैं कि सी.बी.आई. द्वारा बिछाए गए जाल के दौरान रिश्वत स्वीकार करते समय, उन्हें रंगे हाथों पकड़ा गया था। उपरोक्त उद्धृत कानूनी स्थिति को ध्यान में रखते हुए, हमने उन आदेशों की जांच की जिनके तहत प्रत्यर्पण को सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था।

19. उक्त बर्खास्तगी आदेशों से यह पता चलता है कि थानाध्यक्ष, पुलिस थाना साकेत को सी.बी.आई. निरीक्षक द्वारा उक्त जाल के बारे में टेलीफोन पर सूचित किया गया था, जिसके बाद प्रत्यर्पण को गिरफ्तार किया गया था। यह भी पता चलता है कि घटना की प्रारंभिक जांच सहायक पुलिस आयुक्त, लोक शिकायत प्रकोष्ठ, दक्षिण जिला, दिल्ली द्वारा की गई थी जिसमें केवल थानाध्यक्ष का परीक्षण किया गया था। न तो सी.बी.आई. दल के किसी सदस्य, न ही किसी सार्वजनिक गवाह और न ही शिकायतकर्ता पवन गुप्ता का परीक्षण किया गया था। इतना ही नहीं, उक्त बर्खास्तगी आदेशों में दर्ज टिप्पणियों के अनुसार, तलाशी (जाहिरा तौर पर प्रत्यर्पण की उनके

पकड़े जाने के बाद जामा तलाशी के दौरान कोई अपराध में फंसाने वाली सामग्री नहीं मिली।

20. सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि उक्त बर्खास्तगी आदेशों में एक हल्का सा भी जिक्र नहीं है कि शिकायतकर्ता या गवाह के रूप में पूछताछ किए जाने वाले किसी अन्य व्यक्ति को प्रत्यर्थीगण या उनके सहयोगियों में से किसी एक द्वारा उन्हें विभागीय जांच के समक्ष उपस्थित होने से रोकने हेतु आतंकित किया गया था या धमकी दी गई थी या डराया गया था। अन्यथा भी, यह ध्यान में रखते हुए कि प्रतिवादी केवल हेड कांस्टेबल हैं, किसी भी ठोस सामग्री की अनुपस्थिति में, यह आशंका करना तर्कसंगत रूप से संभव नहीं लगता है कि वे सी.बी.आई. टीम के सदस्यों या यहां तक कि शिकायतकर्ता पवन गुप्ता को धमकी देने में समर्थ होंगे, जो सी.बी.आई. के पास प्रत्यर्थीगण के विरुद्ध शिकायत दर्ज करने के लिए पर्याप्त साहसी थे, जैसा कि आरोप लगाया गया था।

21. भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) के तहत विभागीय जांच से बचने के लिए, यह कहना पर्याप्त नहीं है कि इस बात की संभावना है कि कोई भी गवाह/शिकायतकर्ता अपचारी अधिकारी के खिलाफ गवाही देने के लिए आगे नहीं आएगा। इस तरह का विश्वास ठोस और अकाट्य कारणों के आधार पर होना चाहिए और उन कारणों

को बर्खास्तगी आदेश में स्पष्ट रूप से दर्ज किया जाना चाहिए।

22. विचाराधीन बर्खास्तगी आदेशों का प्रासंगिक उद्धरण नीचे दिया गया है :-

“अब तक की गई जांच के दौरान, रिकॉर्ड पर उपलब्ध दस्तावेज, थानाध्यक्ष/पुलिस स्टेशन साकेत के बयान और शिकायतकर्ता श्री पवन गुप्ता के बयान से यह पता चला कि हेड कांस्टेबल (पूर्व) राम किशन मेहता, सं. 2137/एस.डी. (पी.आई.एस. सं. 28093689) और हेड कांस्टेबल (पूर्व) कर्म पाल, सं. 940/एस.डी. (पी.आई.एस. सं. 28107645) दुर्भावनापूर्ण इरादे से भ्रष्ट कार्यों में शामिल पाए गए। उन्होंने घोर लापरवाही, गैर-पेशेवर व्यवहार दर्शाया। उन्हें सी.बी.आई. अधिकारियों ने रंगे हाथों पकड़ा था।

जबकि, एक अनुशासित बल के सदस्य होने के नाते, वे इस देश के नागरिक के जीवन और संपत्ति की रक्षा के लिए जिम्मेदार थे, लेकिन ईमानदारी और सच्चाई से अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने के बजाय वे स्वयं भ्रष्ट आचरण में लिप्त थे, जो सबसे घृणित, सबसे निंदनीय और एक अनुशासित बल का सदस्य होना के रूप में सबसे अप्रत्याशित। यदि पुलिस कर्मी जिस पर कानून के शासन को बनाए रखने की पवित्र जिम्मेदारी है, अपराध और अराजकता के ऐसे कृत्यों में लिप्त है, तो यह सरकार की कानून और व्यवस्था मशीनरी में आम आदमी के विश्वास को चकनाचूर कर देता है। यह तत्काल जनता का ध्यान आकर्षित करता है और प्राधिकारी को कार्रवाई करने के लिए मजबूर करता है। पुलिस के इस तरह के कृत्य संगठन पर अत्यधिक हानिकारक प्रभाव डालते हैं। इस तरह का कदाचार सीधे तौर पर पुलिस के कामकाज के आधार अर्थात् “जनता का विश्वास”, वह नींव जिस पर पुलिस का काम होता है, को नष्ट कर देता है। लोगों के विश्वास के बिना पुलिस लोगों की सेवा के रूप में अप्रासंगिक हो जाएगी। जब सेवा का एक व्यक्तिगत सदस्य इस तरह के घृणित कार्य में फंसा है व लिप्त रहता है, तो निरंतर और अच्छे टीम वर्क पर दृढ़ रूप से निर्मित प्रतिष्ठा और छवि को अपूरणीय क्षति होती है।

जबकि सरकार हमेशा चिंतित रहती है और लोक सेवा से भ्रष्टाचार को जड़ से खत्म करने के लिए हर संभव प्रयास किया जा रहा है, गंभीर कदाचार के इस तरह के कृत्य के बाद यदि चूककर्ता हेड कांस्टेबलों को पुलिस बल में बने रहने की अनुमति दी जाती है, तो यह जनहित के लिए हानिकारक होगा। मामले के तथ्य और परिस्थितियाँ ऐसी हैं कि चूककर्ता हेड कांस्टेबलों के खिलाफ नियमित विभागीय जांच करना तर्कसंगत रूप से व्यावहारिक नहीं होगा क्योंकि यथोचित विश्वास है कि गवाह उनके खिलाफ गवाही देने के लिए आगे नहीं आ सकता है और उनके आधिकारिक पद के दुरुपयोग की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता है। यह आम अनुभव है कि आतंकित करने और डराने-धमकाने के कारण गवाह और शिकायतकर्ता विभागीय जांच में अपचारी व्यक्तियों के विरुद्ध गवाही देने के लिए आगे नहीं आते हैं और इस तरह की धमकी बेईमान पुलिस कर्मियों द्वारा अपनाई जाने वाली एक आम रणनीति है। उग्र व्यक्ति के विरुद्ध गवाही देने के लिए बहुत साहस की भी आवश्यकता पड़ती है और यह कार्य तब अधिक विकट और कठिन हो जाता है जहां अपचारी व्यक्ति पुलिस अधिकारी होते हैं जो गवाहों के बयान/गवाही को प्रभावित करने के लिए अपनी नौकरी का उपयोग कर सकते हैं।

जबकि, पूर्वगामी पैरा में समझाई गई स्थिति की पृष्ठभूमि में, यह स्पष्ट है कि हेड कांस्टेबल (पूर्व) राम किशन मेहता, सं. 2137/एस.डी. (28093689) और हेड कांस्टेबल (पूर्व) कर्म पाल, सं. 940/एस.डी. (28107645) आपराधिक प्रवृत्ति वाले लोक सेवक हैं और इस बात की पूरी संभावना है कि उनके विरुद्ध विभागीय जांच शुरू होने की स्थिति में कोई भी गवाह/शिकायतकर्ता उनके विरुद्ध गवाही देने के लिए आगे नहीं आएगा। इन मजबूर करने वाली परिस्थितियों में, भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) को इस मामले में लागू किया गया है। यह आम जनता और समाज के साथ-साथ कानून के शासन की स्थापना के हित में भी होगा।

23. इसलिए, पुलिस द्वारा भ्रष्टाचार पर एक निबंध लिखने के अलावा, उक्त बर्खास्तगी आदेशों में कुछ भी नहीं कहा गया है, जिसके

आधार पर संबंधित प्राधिकारी इस संतुष्टि पर पहुंचे कि प्रत्यर्थीगण के खिलाफ विभागीय जांच करना तर्कसंगत रूप से व्यावहारिक नहीं होगा। ऐसा प्रतीत होता है कि संबंधित प्राधिकारी एक अनुमानित धारणा रखता है कि चूंकि अपराधी पुलिस अधिकारी हैं, इसलिए कोई भी गवाह या शिकायतकर्ता गवाही देने के लिए आगे नहीं आएगा। यह धारणा, न्यूनतम टिप्पणी के लिए, न केवल आधारहीन है, बल्कि पूरी तरह से तर्कहीन भी है। इस धारणा को स्वीकार करने से यह असंगत परिणाम निकलेगा कि पुलिस अधिकारियों द्वारा कदाचार के सभी मामलों में विभागीय जांच संभव नहीं होगी और अधिकारी भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) का सहारा लेने के लिए अनिवार्य रूप से मजबूर होंगे, जिससे दिल्ली पुलिस (दंड एवं अपील) नियमावली, 1980 के तहत बनाए गए विस्तृत ढांचे पूरी तरह से कचरे के डिब्बे में फेंक दिए जाएंगे।

24. उपरोक्त के आलोक में अप्रतिरोध्य निष्कर्ष यह है कि याचीगण द्वारा कानून की सम्यक प्रक्रिया का पालन किए बिना बर्खास्तगी आदेशों द्वारा प्रत्यर्थीगण की सेवाओं को समाप्त कर दिया गया था और भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2)(ख) के तहत शक्तियों का उपयोग पूरी तरह से अरक्षणीय था।

25. उपरोक्त चर्चा को देखते हुए, हम आक्षेपित आदेशों में कोई

दुर्बलता नहीं पाते हैं, इसलिए उन्हें बरकरार रखा जाता है और इन दोनों याचिकाओं के साथ-साथ लंबित आवेदनों को भी खारिज किया जाता है।

गिरीश कठपालिया
(न्यायाधीश)

सुरेश कुमार कैत
(न्यायाधीश)

18 जुलाई, 2024/एस/आरवाई

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।